BPSC 114 - Indian Political Thought

An understanding of the Ideas of Dr B R Ambedkar by Dr. Manish Jha.

डॉ० भीमराव अम्बेदकर

डॉ० भीमराव अम्बेदकर एक सफल स्वतंत्रता सेनानी व अद्भुत मेधा के धनी होने के साथ साथ संवेदनशील मानवीय स्वभाव के स्वामी थे। स्वतंत्रता सेनानी के रूप में उन्होंने अपना सक्रिय सहयोग दिया। स्वतंत्रता के उपरांत भारत के नये संविधान निर्माण के स्तंभ भी बने। साथ ही महार जाति में जन्म लेने के कारण प्राप्त सामाजिक उपेक्षा ने उनके मन में अस्पृश्यों के उद्धार के प्रति दृढ़ प्रतिज्ञ कर दिया। उन्होंने यहाँ तक कहा कि 'जीवन की सफलता अछूतों का स्तर मानवता के स्तर तक लाने में है।" दलित उद्धार के प्रति इस निष्ठा के कारण उन्हें भारत का 'मार्टिन लूथर' कहा गया और तदुपरान्त उन्हें "बोधिसत्व" की उपाधि से भी विभूषित किया गया। वर्तमान भारत का दलित आन्दोलन अम्बेदकर के प्रयासों की ही सार्थक देन है।

महार जाति में जन्मे भीमराव (1891) बचपन से ही मेधावी थे। आगे चलकर उन्होंने बम्बई के एलिफिस्टन कॉलेज में प्रवेश लिया। 1913 में गायकवाड़ महाराज की छात्रवृत्ति पाकर वे अमेरिका के कोलम्बिया विश्वविद्यालय गये। वहाँ उन्होंने अर्थशास्त्र की पढ़ाई की। विधि के अध्ययन हेतु वे ब्रिटेन भी गये जहाँ उन्होंने 'बार एट लॉ' की उपाधि भी प्राप्त की। इंग्लैंड से लौटकर उन्होंने वकालत की आजीविका शुरू की साथ ही उन्होंने अछूतों के उद्धार के लिए संघर्ष भी प्रारंभ कर दिया। इस गतिविधि को गति प्रदान करने के लिए उन्होंने 1924 में "बहिष्कृत हितकारिणी सभा' की स्थापना की। दलितों में संगठित संघर्ष की प्रेरणा देने के लिए उन्होंने महाड़ सत्याग्रह किया। इस सत्याग्रह ने दलितों में आत्मविश्वास का भाव जाग्रत किया। 1930 में उन्होंने All India Depressed Class Association का अध्यक्ष पद ग्रहण किया। 1930-31 के गोलमेज सम्मेलनों में उन्होंने दलित के प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया और दलितों के लिए पृथक् प्रतिनिधित्व की वकालत की। 1936 में दलित व मजदूरों के हितों के लिए उन्होंने 'इण्डिपेन्डेन्ट लेबर पार्टी' की स्थापना की। 1942 में उन्होंने इसका रूपान्तरण 'अखिल भारतीय अनुसूचित जाति संघ' में कर दिया। यद्यपि कांग्रेस के साथ डॉ० अम्बेदकर के काफी मतभेद थे तथापि उनकी मेधा के आधार पर उन्हें 'संविधान प्रारूप समिति' का अध्यक्ष बनाया गया जिस दायित्व को उन्होंने पूरी निष्ठा से निभाया। दलितों के उत्थान के लिए संवैधानिक अधिकारों की व्यवस्था डॉ० अम्बेदकर के प्रयासों का ही परिणाम है। 1947 में उन्हें भारत सरकार का कानून मंत्री बनाया गया। 1956 में हिन्दू सामाजिक व्यवस्था की संकीर्णता व अनुदारवादी चरित्र के कारण उन्होंने नागपुर में 5 लाख व्यक्तियों के साथ हिन्दू धर्म का त्याग कर बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया। दिसंबर 1956 में उनका देहावसान हो गया। निर्भयता, स्पष्टवादिता उनके स्वभाव के विशिष्ट अंग थे, जो सदैव स्मरणीय बने रहेंगे।

डॉ० अम्बेदकर पर महात्मा बुद्ध, कबीर व ज्योतिबा फूले का काफी प्रभाव था। इन महापुरुषों के अतिरिक्त वे अमेरिकी ~~बुकर~~ टी. वाशिंगटन से भी काफी प्रभावित थे। The Untouchables who are they ?, Who are the Shudras, Annhilation of Caste, Emancipation of the Untouchables आदि इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

डॉ० अम्बेदकर के सार्वजनिक जीवन व विचारधारा का सर्वप्रमुख लक्ष्य था - दलितोद्धार। उनकी यह मान्यता थी कि हिन्दू सामाजिक व्यवस्था (जाति प्रथा) की रूढ़िवादिता व जड़ता शूद्रों का कभी उत्थान नहीं कर सकती। इस पृष्ठभूमि में उन्होंने समझा कि अछूत सभी प्रकार से कमजोर हैं और वे सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक क्षेत्रों में सवर्ण हिन्दुओं का मुकाबला नहीं कर सकते। यद्यपि भारत में दलितोद्धार के कई प्रयत्न इतिहास में किये गये थे तथापि डॉ० अम्बेदकर के अभियान का स्वरूप अन्य अभियानों से भिन्न था। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि शूद्रों की अस्पृश्यता व सामाजिक वैषम्य हिन्दू समाज की जाति व्यवस्था की उपज है। इसकी समाप्ति के लिए जाति व्यवस्था को समाप्त करना अपरिहार्य है। वे जातिप्रथा को हिन्दूधर्म की सबसे बड़ी खराबी मानते थे। वे जाति व्यवस्था के मूल स्वरूप पर प्रहार करना चाहते थे। डॉ० अम्बेदकर कहा करते थे कि 'मनुस्मृति' ने अछूतों का सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक शोषण कर उन्हें दासता दी है। वस्तुत: वे जाति व्यवस्था को समूल नष्ट करना चाहते थे।

उन्होंने अछूतों की वर्तमान स्थिति के लिए स्वयं अछूतों को भी उत्तरदायी माना। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि अछूत अपने बुरे आचरण व हीनता की भावना का त्याग कर आत्मसम्मानपूर्ण जीवन की ओर प्रवृत्त हों। इसके लिए उनके सुझाव थे (1) अछूत संगठित हों (2) शिक्षित हों व (3) अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष करें। उनके शब्दों में "यदि महार अपने बच्चों को स्वयं के मुकाबले अच्छी दशा में रखने की इच्छा नहीं रखते, तो एक मनुष्य व एक जानवर में कोई अन्तर नहीं होगा"।

डॉ० अम्बेदकर ने सार्वजनिक स्थलों के उपयोग में भेदभाव का विरोध किया। पहला सत्याग्रह उन्होंने 1927 में 'महार सत्याग्रह तालाब' के रूप में किया और पर्याप्त संघर्ष के बाद उन्हें सफलता मिली। उन्होंने कहा कि "यह सत्याग्रह हिन्दुओं का हृदय परिवर्तन करने के लिए है।" मंदिर प्रवेश के संदर्भ में उन्होंने केन्द्रीय सभा में एक बार कहा कि "जो धर्म अपने माननेवालों के बीच पक्षपात करता है, वह धर्म, धर्म नहीं है।"

उन्होंने ब्रिटिश शासन के दौरान धार्मिक अल्पसंख्यकों की तरह दलितों के लिए भी पृथक् प्रतिनिधित्व की वकालत की। पहले और दूसरे गोलमेज सम्मेलनों में उन्होंने इसकी वकालत भी की। डॉ० अम्बेदकर दलितों के पृथक् प्रतिनिधित्व के आधार पर उन्हें एक राजनीतिक शक्ति का रूप देना चाहते थे और 1932 का 'पूना समझौता' पर हस्ताक्षर उन्हीं परिस्थितियों के दबाव के कारण ही किए थे।

डॉ० अम्बेदकर प्रजातांत्रिक व्यवस्था में नागरिकों का समानता का अधिकार स्वाभाविक रूप से प्रदान कर सामाजिक समानता की व्यवस्था लाने के पक्षधर थे। उन्होंने दलितों व पिछड़ों के उत्थान के लिए विशेष सुविधाएँ (Protective discrimination) भी राज्य द्वारा उपलब्ध कराने की वकालत की। सरकारी नौकरियों में आरक्षण की व्यवस्था शायद उन्हीं के प्रभाव का एक तत्व रहा होगा।

अपने क्रान्तिकारी दृष्टिकोण के कारण उनकी यह मान्यता थी कि दलित जबतक हिन्दू हैं तबतक उनके लिए सम्मानपूर्ण जीवन बिता पाना संभव नहीं है, अतः उन्होंने दलितों के धर्म परिवर्तन की वकालत की। बौद्ध धर्म में उन्होंने समानता का सन्देश पाया और उन्होंने बौद्धधर्मान्तरण की वकालत दलितों से की। इस धर्म परिवर्तन का भी उद्देश्य दलित वर्ग की एक पृथक् पहचान व उनके सम्मान की रक्षा करनी ही थी। वस्तुतः डॉ० अम्बेदकर दलित समाज के लिए संघर्ष करने वाले महान योद्धा थे। इसी आधार पर उन्हें 'दलितों का मसीहा' कहा जाता है।

धर्म के संबंध में उनका विचार था कि 'धर्म व्यक्ति के लिए है, व्यक्ति धर्म के लिए नहीं।' जो धर्म मनुष्य-मनुष्य के बीच अपने ही अनुयायियों में भेदभाव करता है, वह धर्म नहीं वरन् मानवता का अपमान है। उन्होंने इसी कारण से हिन्दू धर्म की तीखी आलोचना की। उनकी यह मान्यता बनी कि दलितों का हिन्दू धर्म व सामाजिक व्यवस्था के भीतर प्रगति संभव नहीं है। बौद्ध धर्म को समतामूलक पाकर उन्होंने दलितों को बौद्ध धर्म अपनाकर अपनी एक पृथक् अस्मिता बनाने की वकालत की। डॉ० वर्मा के शब्दों में "उन्होंने बौद्ध धर्म में मार्क्सवाद का एक नैतिक और सहिष्णु विकल्प खोजा और उनके अनुयायियों ने उन्हें गर्व के साथ 'बीसवीं सदी का बोधिसत्व' कहा।"

दलित उत्थान के विषय में उनके गाँधी व कांग्रेस से वैचारिक मतभेद थे। गाँधी यद्यपि हिंदू समाज में विद्यमान छुआछूत की भावना समाप्त कर दलितों की स्थिति सुधारना चाहते थे तथापि वे वर्णव्यवस्था को समाप्त करने के पक्ष में नहीं थे। वे भारत की वर्ण व्यवस्था को यहाँ की सामाजिक व्यवस्था की रीढ़ मानते थे। जबकि अम्बेदकर वर्णव्यवस्था को ही दलितों की अमानवीय स्थिति का मूल कारण मानते थे, उनके विचार में वर्णव्यवस्था को समाप्त किये बिना, दलितों का उत्थान संभव नहीं है। गाँधी दलितों को हिन्दू समाज का अभिन्न हिस्सा मानते थे अतः वे उनके पृथक् प्रतिनिधित्व के समर्थक नहीं थे। जबकि अम्बेदकर दलितों की अपनी पृथक् सामाजिक व राजनीतिक पहचान दिलाने के लिए पृथक् प्रतिनिधित्व के समर्थक थे। अम्बेदकर देश की राजनीतिक स्वतंत्रता के पक्षधर थे, लेकिन उनकी दृष्टि में सामाजिक समानता व दलितोद्धार का कार्य उससे भी अधिक महत्वपूर्ण था। उन्होंने कांग्रेस को सदैव एक ऐसा मध्यमवर्गीय संगठन कहा जिससे दलितों के हित में किसी कार्य की अपेक्षा नहीं की जानी चाहिए।

तथापि डॉ० अम्बेडकर न केवल प्रबल देशभक्त वरन् राष्ट्र की एकता को बनाये रखने के प्रबल समर्थक थे। 1947 के मध्य में उन्होंने देशी रियासतों को परामर्श देते हुए कहा था कि रियासतों को अपनी प्रभुसत्ता भारतीय संघ में मिला देनी चाहिए। वी०पी० वर्मा के शब्दों में, "इसमें सन्देह नहीं कि वे देशभक्त थे और राष्ट्रीय एकीकरण के विरोधी नहीं थे। कोई भी उनके इस विचार का विरोध नहीं कर सकता कि अछूतों के लिए हिन्दुत्व द्वारा उन पर लादी गई अपमानजनक स्थितियों का विरोध और उससे मुक्ति ब्रिटिश शासन से देश की राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करने की तुलना में अधिक आवश्यक कार्य था।"

इन परिस्थितियों में सुधार के लिए वे कानूनी व सामाजिक उपायों के पक्षधर थे। लोकतंत्र व संसदीय व्यवस्था में उनकी गहन आस्था थी। उन्होंने अपने चिन्तन में 'वर्ण व्यवस्था के उन्मूलन' को मूल तत्व बनाया। वे राजनीतिक चिन्तन में उदारवादी विचारों के पक्षधर थे। डॉ० अम्बेडकर ने यथार्थ रूप में इस बात का प्रतिपादन किया कि जाति व्यवस्था पूर्णतया अव्यवहारिक, अन्यायपूर्ण व गरिमाहीन है। आज इस व्यवस्था का कोई औचित्य नहीं है। अतः इसे समाप्त कर देना चाहिए। अन्य समाज सुधारकों से अलग डॉ० अम्बेडकर ने दलितों को संगठित कर उन्हें अपने अधिकारों की रक्षा व आत्मसम्मान में अभिवृद्धि के लिए प्रेरित किया। भारत में दलितों की मुक्ति के लिए उन्होंने वही कार्य किया जो कार्य अब्राहम लिंकन ने 'दासों की मुक्ति के लिए' और पॉल रॉबसन ने 'अमेरिका के नीग्रो की मुक्ति के लिए' किया था। उन्होंने नारी उत्थान की दिशा में भी प्रशंसनीय कार्य किये। उनकी यह मान्यता थी कि स्त्रियों के शिक्षा और सामाजिक जीवन के अन्य क्षेत्रों में पुरुषों के समान ही अवसर प्राप्त होने चाहिए। इसी उद्देश्य से उन्होंने 'हिन्दू कोड बिल' तैयार किया तथा उसे संसद में पारित करवाने के गंभीर प्रयास भी किए। अपनी अप्रतिम प्रतिभा का परिचय देते हुए संविधान सभा की प्रारूप समिति के अध्यक्ष के तौर उन्होंने भारतीय संविधान के निर्माण में प्रमुख भूमिका अदा की। संविधान की प्रस्तावना और अन्य भागों में 'सामाजिक आर्थिक न्याय' का जो संकल्प व्यक्त किया गया है, उसमें अम्बेडकर के प्रयत्नों का महान योग है। अंत में, अम्बेडकर की यह मान्यता कि भारत की पूरी स्वतंत्रता तभी संभव है जब वह राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ साथ सामाजिक व आर्थिक स्वतंत्रता भी हासिल करे, भारतीय शासन व्यवस्था के लिए आज भी एक मूलमंत्र की भाँति प्रासंगिक है जिसका अनुकरण कर एक बेहतर भारत की कल्पना को मूर्तरूप किया जा सकता है।